बेहतरी की गुंजाइश

अमेरिकी विदेश सचिव माइक पॉम्पियो ऐसे समय में भारत आये हैं, जब दोनों देशों के बीच अनेक मोर्चों पर खींचतान चल रही है. अमेरिकी प्रतिबंधों की वजह से भारत को ईरान से तेल आयात को रोकना पड़ा है. राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप अक्सर आयात शुल्कों को लेकर भारत की आलोचना करते रहे हैं और कुछ समय पहले ही अमेरिका ने बिना शुल्क अनेक वस्तुओं के आयात को मिली विशेष छूट को खत्म कर दिया. इसके बदले भारत ने भी लगभग सालभर की हिचकिचाहट के बाद 28 अमेरिकी वस्तुओं के आयात पर भी शुल्क बढ़ा दिया है. अमेरिकी कंपनियों के लिए बाधक नियमों तथा स्थानीय स्तर पर डिजिटल डेटा के संग्रहण की भारत की मांग भी तनातनी का एक कारण हैं. सूचना तकनीक के क्षेत्र में वैश्विक बढ़त के साथ कदमताल करने की कोशिश में भारत ने 5जी को अपनाने का फैसला लिया है. अमेरिका अपने अनेक करीबी देशों पर दबाव डालकर इस तकनीक में अग्रणी चीनी कंपनी हुवै को प्रतिबंधित करा चुका है. उसे भारत से भी ऐसी ही अपेक्षा है. ट्रंप प्रशासन द्वारा वीजा नियमों में बदलाव से कुशल भारतीय पेशेवरों के सामने मुश्किलें पैदा हो रही हैं. इसके अलावा अफगानिस्तान में शांति और विकास तथा भारत के विरुद्ध सीमा-पार से संचालित आतंकवाद पर भी सहयोग तेज करना इस यात्रा का एक मुख्य एजेंडा है. रूस से सैनिक साजो-सामान की खरीद पर अमेरिकी आपत्ति पर भी चर्चा होने की बात कही जा रही है. पॉम्पियो के साथ मीडिया से मुखातिब विदेश मंत्री एस जयशंकर ने कहा कि अगर दो देशों के बीच व्यापारिक और रणनीतिक संबंध हैं, तो कुछ मसलों पर असहमतियां या विवाद भी स्वाभाविक हैं. दोनों नेताओं ने यह उम्मीद जतायी है कि आपसी बातचीत से परस्पर राष्ट्रीय हितों के अनुकूल विवादित मुद्दों को सुलझा लिया जायेगा. इस आशावादी रवैये से असहमत होने का फौरी आधार नहीं है, क्योंकि बीते डेढ़ दशकों में दोनों देशों के संबंध बहुत गहरे हुए हैं. पूर्व राष्ट्रपति बराक ओबामा की तरह राष्ट्रपति ट्रंप से भी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के व्यक्तिगत संबंध अच्छे हैं. कूटनीति में यह तत्व महत्वपूर्ण कारक है. विदेश मंत्री जयशंकर अमेरिका में राजदूत भी रह चुके हैं तथा परस्पर निकटता बढ़ाने में उनकी उल्लेखनीय भूमिका रही है. लेकिन कूटनीति की राह रपटीली भी होती है. राष्ट्रपति ट्रंप के बयानों के तेवर और भारत आने से पहले पॉम्पियो द्वारा हमारे देश में मौलिक अधिकारों की स्थिति पर नकारात्मक रिपोर्ट जारी करने जैसे संकेत चिंताजनक भी हैं. अमेरिकी कांग्रेस में विदेश मामलों की समिति के प्रमुख इलियट एंजिल ने सोमवार को पॉम्पियो को पत्र लिखकर कहा है कि भारत के प्रति ट्रंप प्रशासन का नीतिगत रवैया अस्थिर, दबावपूर्ण और अनिश्चित है. यह पत्र अमेरिकी राजनीतिक गलियारे में बढ़ रही चिंता का संकेत है. बहरहाल, उम्मीद रखनी चाहिए कि पॉम्पियो की यह यात्रा तनाव कम करने में सहायक होगी.

अमेरिकी विदेश सचिव माइक पॉम्पियो और विदेश मंत्री जयशंकर ने उम्मीद जतायी है कि बातचीत से परस्पर राष्ट्रीय हितों के अनुकूल विवादित मुद्दों को सुलझा लिया जायेगा.

संकट में घिरे हैं क्षेत्रीय क्षत्रप

नवीन जोशी
वरिष्ठ पत्रकार
naveengjoshi@gmail.com

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा की प्रचंड विजय ने न केवल मुख्य विरोधी दल कांग्रेस को हतप्रभ किया है, बल्कि भाजपा-विरोध का झंडा उठाये ताकतवर क्षेत्रीय क्षत्रपों के पैरों तले की जमीन भी खिसका दी है. ये दल पराजय से उबरने और नये सिरे से उठ खड़े होने की बजाय और भी बिखर रहे हैं. उनके खेमे में हताशा ही नहीं, भगदड़ भी मची है. आनेवाले चुनावी अखाड़ों में उनके सामने जहां भाजपा का तगड़ा पहलवान होगा, वहीं उनका अपना पहलवान बाहरी-भीतरी दांवों से अभी से चित दिख रहा है.

दूसरी तरफ वे प्रभावशाली क्षेत्रीय नेता, जिन्होंने मोदी-विरोध का परचम नहीं उठा रखा था या जो भाजपा की तरफ झुके हुए थे, उनके खेमे सकुशल और आनंद में हैं. न उनके सेनानी पाला छोड़कर भाग रहे हैं, न ही बाहरी ताकतें वहां सेंध लगा रही हैं. उत्तर प्रदेश में सपा-बसपा गठबंधन, बंगाल में ममता बनर्जी और आंध्र प्रदेश में चंद्र बाबू नायडू मोदी को दोबारा सत्ता में न आने देने के लिए सबसे ज्यादा कमर कसे हुए और मुखर थे. लोकसभा चुनाव में इन सबने मुंह की खायी. ममता ठीक-ठाक सीटें जीतने में कामयाब रहीं, लेकिन भाजपा ने उनके किले में भारी सेंध लगा दी है. सपा-बसपा गठबंधन पूरी तरह विफल रहने के बाद टूट चुका है और मोदी के खिलाफ राष्ट्रीय स्तर पर मोर्चा बनाने में सक्रिय रहे चंद्रबाबू नायडू के पैर अपनी जमीन से उखड़ गये हैं.

चुनाव संपन्न होने के बावजूद इन क्षत्रपों की विपदाओं का अंत नहीं हुआ, बल्कि बढ़ गया है. मोदी के खिलाफ दहाड़नेवाली 'बंगाल की शेरनी' सबसे ज्यादा संकट में हैं. उनके छह विधायक, नगरपालिकाओं के दर्जनों सदस्य और बड़ी संख्या में कार्यकर्ता पार्टी छोड़कर भाजपा में जा चुके हैं. यह सिलसिला जारी है. बिना चुनाव लड़े भाजपा बंगाल में पहली बार एक जिला पंचायत में बहुमत हासिल कर चुकी है. यह संकेत है कि तृणमूल कांग्रेस में भारी हाला-डोला मचा है.

बंगाल में दो साल बाद विधानसभा चुनाव होने हैं. ममता परेशान हैं कि भाजपा से अपना साम्राज्य बचाने के लिए वे क्या करें. यह विडंबना ही है कि जिन हथकंडों से उन्होंने बंगाल में कांग्रेस और वाम दलों का सफाया किया, वैसे ही हथकंडे भाजपा उनके साथ आजमा रही है. उन्हें कुछ सूझ नहीं रहा. कभी वे आरएसएस के संस्थापक श्यामा प्रसाद मुखर्जी को बंगाली अस्मिता से जोड़ने का दांव खेलने की कोशिश कर रही हैं और कभी 'जय श्रीराम' के जवाब में 'जय मां काली' का नारा देने का बचकाना प्रयास कर रही हैं.

ममता की तरह ही राजनीतिक चक्रव्यूह में फंसे हुए अखिलेश यादव और मायावती भी हैं. उत्तर प्रदेश में भाजपा को हराने के लिए उन्होंने जो गठबंधन किया, वह विफल रहा. इस तथ्य के बावजूद कि देश के सबसे बड़े राज्य में भाजपा को चुनौती दे सकनेवाली आज भी यही दो पार्टियां हैं, मायावती ने हार की जिम्मेदारी सपा पर डालते हुए गठबंधन तोड़ दिया है. पहले तय था कि आगामी विधानसभा चुनाव तक गठबंधन रहेगा. अब दोनों आनेवाले चुनावों में एक-दूसरे के खिलाफ ताल ठोकेंगे. यह स्थिति भाजपा के लिए परम सुखदायी है.

मायावती अपने भाई-भतीजे को पार्टी की जिम्मेदारियां देकर दलितों में अपनी पकड़ फिर से मजबूत बनाना चाहती हैं, लेकिन बदली परिस्थितियों और मतदाताओं के नये वर्ग की अपेक्षाओं के अनुरूप राह चुनने की शायद नहीं सोच रहीं.

अखिलेश यादव से ज्यादा ठगा हुआ और कोई नेता आज अनुभव नहीं कर रहा होगा. उन्होंने मायावती का जूनियर पार्टनर बनना स्वीकार ही इसलिए किया था कि भाजपा को हराने के लिए जिन दलित वोटों का सहारा मिलेगा, वे आगे उनकी राजनीति के सारथी बनेंगे. उनके लिए तो 'माया मिली न राम' वाली स्थिति है. परिवार और चाचा से अखिलेश ने बैर लिया, पिता को किनारे किया, विपरीत सलाह के बावजूद बसपा से तालमेल किया और हाथ कुछ आया नहीं. अब उनके लिए आगे की राह कठिन और अनिश्चित है, यद्यपि उनके पास लंबी पारी है.

और, चंद्रबाबू नायडू? पिछले साल तक एनडीए में मोदी के साथ रहे नायडू ने आंध्र की राजनीति का गणित लगाकर न केवल मोदी का साथ छोड़ा, बल्कि उनके खिलाफ आक्रामक रुख अपनाते हुए एक राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाया. आज वे अपने राज्य में लगभग पैदल हैं. तेलुगु देशम के छह में से चार राज्यसभा सदस्य भी उनका साथ छोड़कर भाजपा में चले गये और नये मुख्यमंत्री जगन रेड्डी उनकी बनायी इमारत तक तोड़ने में लगे हैं. जगन ने जैसा समर्थन पाया है, उसे देखते हुए नायडू को राज्य में अपना आधार बचाने के लिए बहुत पापड़ बेलने होंगे.

तीन प्रभावशाली क्षेत्रीय नेता ऐसे हैं, जिन्होंने चुनावों में मोदी विरोध को अपनी राजनीति का केंद्र नहीं बनाया था. उड़ीसा में नवीन पटनायक, तेलंगाना में चंद्रशेखर राव और आंध्र प्रदेश में जगन रेड्डी ने या तो भाजपा के प्रति नरम रुख रखा या कांग्रेस एवं भाजपा से बराबर दूरी बनाये रखी. इन्होंने नयी स्थितियों में मतदाता को समझा. ये तीनों ही अपने-अपने राज्यों में निश्चिंत होकर शासन चला रहे हैं. उनकी पार्टियों में कोई भीतरघात नहीं है, कोई पार्टी छोड़कर नहीं जा रहा, किसी तरह की 'खरीद-फरोख्त' की शिकायत भी उनकी तरफ से नहीं आ रही.

तो क्या यह निष्कर्ष निकाला जाये कि मोदी-विरोधी क्षेत्रीय क्षत्रपों को अपनी राजनीति की कीमत चुकानी पड़ रही है और भाजपा से बैर नहीं पालनेवाले नेता इसी कारण अपने राज्यों में निश्चिंत हैं? यह तो साफ है कि जो क्षेत्रीय क्षत्रप धारा के विरुद्ध तैरे या जो जनता का मन समझ नहीं पाये या जो अपनी राजनीति के कैदी रहे, उन्हें मुंह की खानी पड़ी.

ममता, मायावती, अखिलेश और नायडू को अपने-अपने राज्यों में प्रासंगिक और प्रभावशाली बने रहने के लिए अपनी राजनीति बदलनी होगी, क्योंकि मतदाता बदल रहा है. कभी हैदराबाद को आइटी सिटी बनाने के लिए ख्यात नायडू को सोचना होगा कि मतदाता ने उन्हें हाशिये पर क्यों धकेला. बेवजह गरजने की बजाय ममता को इस पर मंथन करना चाहिए कि 2011 में वाम गढ़ ध्वस्त कर तृणमूल कांग्रेस को सत्ता सौंपनेवाला बंगाल अब उनसे क्यों रूठ रहा है. मायावती और अखिलेश की निगाह अपने जातीय वोट बैंक के भीतर उभरते महत्वाकांक्षी युवा वर्ग की अपेक्षाओं पर होनी चाहिए.

पारंपरिक वोट बैंक के सहारे आगे की नैया आसानी से पार नहीं होगी. अगले विधानसभा चुनावों तक उनके पास पर्याप्त समय है.

क्या यह निष्कर्ष निकाला जाये कि मोदी विरोधी क्षेत्रीय क्षत्रपों को अपनी राजनीति की कीमत चुकानी पड़ रही है और भाजपा से बैर नहीं पालनेवाले नेता इसी कारण अपने राज्यों में निश्चिंत हैं?

बोधि वृक्ष

ज्ञान की सजगता

जब तुम स्वस्थ और बलिष्ठ हो, तब भी यह जान लो कि एक शक्ति है, जो तुम्हारी देखभाल करती है. अगर हम ये बात समझ जायें तो बहुत इत्मीनान हो जाता है, आराम मिलता है, और मन से असुरक्षा की भावना और सभी भय चले जाते हैं. बहुत विश्राम, आत्मविश्वास, विश्वास और सभी कुछ आ जाता है. जीवन में जिस भी चीज की आवश्यकता होती है, वह अपने आप आ जाती है. तो, जब हम कमजोर थे, किसी ने हमारी देखभाल की थी, और अगर हम भविष्य में कभी कमजोर पड़े, तब भी कोई हमारी देखभाल करेगा. आज भी कोई हमारी देखभाल कर रहा है, और हमें भी वैसा ही करना चाहिए. जैसे भी हो सके, जहां भी जरूरत हो, हमें भी देखभाल करनी चाहिए. यही मनुष्य जीवन है. मनुष्य जीवन के दो ध्येय हैं. एक तो है कि तुम ने क्या लिया, और दूसरा है कि तुमने क्या दिया. तो, दुनिया से क्या ले सकते हो? धन तो तुम दुनिया से बाहर नहीं ले जा सकते हो. तुम करोड़ों डॉलर कमा सकते हो, पर तुम्हें इसे यहीं छोड़ कर जाना होगा. यह तुम्हारे साथ नहीं जा सकता. इतने करोड़ों डॉलर या यूरो से तुम इतनी ही मदद ले सकते हो कि तुम्हारे लिये भोजन, कपड़ों, बिस्तर, सोने के लिए कमरे, और थोड़ी-बहुत यात्रा की व्यवस्था हो जाये. बस इतना ही. धन तुम्हें आनंद नहीं दे सकता. हमें धन से आनंद की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए. अगर हम ऐसा करते हैं, तो हम अक्लमंद नहीं हैं. भूख मिटाने के लिए तुम्हें भोजन चाहिए, न कि धन. तुम्हें धन से आनंद पाने की उम्मीद नहीं करनी चाहिए. तुम यूरो से भोजन खरीद सकते हो, यह एक दूसरी बात है. अंततः धन से आनंद नहीं खरीदा जा सकता है. हमें यह ठीक तरह जान लेना चाहिए. जीवन में सहूलियतों के साथ रहो, पर तुम्हें मिला क्या? जो तुम्हारे साथ जा सकता है, वह है ज्ञान. तुम्हारी चेतना में जिसकी छाप पड़ती है, वह है ज्ञान. तो, तुमने कितना ज्ञान कमाया है? किताब में कुछ पढ़ना ज्ञान नहीं है. ज्ञान सजगता से मिलता है. तुम कितने सजग हो? तुम्हारा मन कितना विशाल है? तुमने दुनिया को कितना प्रेम दिया है?

श्रीश्री रविशंकर

जोखिम में दूरसंचार की कामयाबी

अजीत रानाडे
सीनियर फेलो, तक्षशिला इंस्टीट्यूशन
editor@thebillionpress.org

भारत की दूरसंचार (टेलीकॉम) क्रांति ने पूरे विश्व की तारीफ हासिल की है. एक समय तो यह सबसे तीव्र गति से वृद्धि करने वाला विश्व में सबसे कम लागत का क्षेत्र था, जो सबको समावेशी विकास के अवसर प्रदान कर रहा था. एयरलाइंस या बिजली के मामले में, सुदूरवर्ती इलाकों तक सेवाएं पहुंचाने हेतु सरकार को सेवाप्रदाताओं के लिए बाध्यकारी प्रावधान तय करने पड़ते हैं. मगर दूरसंचार के साथ उसे ऐसा नहीं करना पड़ता, जिसके लिए इस प्रावधान के अंतर्गत कर्णांकित सब्सिडी निधि बगैर उपयोग के बची ही रह गयी, क्योंकि उसकी जरूरत ही नहीं पड़ी. अब इस निधि का उपयोग डिजिटल इंडिया पहल के अंतर्गत सभी गांवों तक ऑप्टिक फाइबर संपर्क जोड़ने में किया जा रहा है.

भारत में दूरसंचार क्रांति वस्तुतः नीति-निर्माताओं एवं बिजनेस स्कूलों द्वारा अध्ययन के लिए एक चौंकानेवाला मामला प्रस्तुत करती है. 1990 के दशक के शुरुआती सालों से यह क्रांति मुख्यतः निजी क्षेत्र के निवेशों, उनकी उद्यमी ताकत तथा जोखिम लेने की तैयारी से ऊर्जा पाती रही है. काबिलेगौर है कि यह उपलब्धि उदारीकरण के शुरुआती सिलसिले में की गयी कुछ अहम भूलों के बावजूद प्राप्त की गयी, जिन्होंने दूरसंचार में निजी क्षेत्र को दिवालियेपन की कगार पर ही पहुंचा दिया. यही वजह थी कि वर्ष 1999 में प्रधानमंत्री वाजपेयी नीत सरकार ने स्पेक्ट्रम के लिए तयशुदा फीस की जगह राजस्व-साझा मॉडल को अपनाया. इस कदम से यह उद्योग अचानक ही जी उठा तथा शब्दशः उड़ चला. फिर तो अगले एक दशक तक इसने सभी कीर्तिमान ध्वस्त करते हुए ग्राहकों, निवेशों की विराट वृद्धि के साथ ही उपयोग शुल्कों में उत्तरोत्तर तीव्र गिरावट दर्ज करायी.

मगर अभी इस क्षेत्र की स्थिति तथा इसका वित्तीय स्वास्थ्य इस गुलाबी तस्वीर के बिल्कुल उलट है. इस मैदान मे निजी क्षेत्र के तीन (रिलायंस जियो, एयरटेल एवं वोडाफोन आइडिया) तथा सार्वजनिक क्षेत्र के दो (बीएसएनएल एवं एमटीएनएल) प्रमुख किरदार मौजूद हैं, जबकि तीन प्रमुख निजी कंपनियां (एयरसेल, टाटा डोकोमो एवं आरकॉम) न सिर्फ बंद हो चुकी हैं, बल्कि पिछले डेढ़ वर्षों के दौरान लगभग एक लाख रोजगार भी छिन चुके हैं. इस क्षेत्र की कुल ऋण राशि 7.5 लाख करोड़ रुपये की सीमा का स्पर्श कर रही है. दकियानूसी अनुमान से भी इस क्षेत्र का सालाना ब्याज भार 80 हजार करोड़ रुपये से ज्यादा है, जो उसकी चालू आय से भी आगे निकल एक भीषण चिंता की वजह बन चुका है. खासकर निकट भविष्य में ही 5जी सेवाओं की शुरुआत के आलोक में अभी इस क्षेत्र में बड़े निवेशों की जरूरत है.

पर प्रति उपयोगकर्ता राजस्व (जो लाभदायकता का सर्वोत्तम संकेत है) सितंबर 2016 के 121 रुपये से घटकर दिसंबर 2018 में 70 रुपये मात्र रह गया है. यह एक और बात है कि इन अत्यंत नीची दरों की वजह से इंटरनेट के उपयोग में भारत विश्व में सौवें पायदान से भी नीचे के स्तर से छलांग लगा वर्तमान में विश्व के शीर्ष तीन किरदारों में शामिल हो चुका है, जहां कुल 1.1 अरब ग्राहकों में से 40 प्रतिशत अपने फोन में इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं.

इस क्षेत्र की वित्तीय मुश्किलों का मतलब यह है कि इसमें न सिर्फ भविष्य के निवेशों हेतु मुनाफे का टोटा है, बल्कि सरकार के राजकोषीय लाभ में भी तेज गिरावट हो रही है. सरकार को भुगतान किया गया राजस्व हिस्सा इस क्षेत्र के स्वर्णिम युग के एक लाख करोड़ रुपयों से वर्तमान में महज 30 हजार करोड़ रुपयों तक जा गिरा है. ऐसी स्थिति में इस क्षेत्र के पास इसके अलावा और कोई उपाय शेष नहीं है कि वह लागतों, निवेशों, सेवाओं, एवं संभवतः ग्राहकों की तादाद में भी कटौती करने पर उतर जाये.

दूरसंचार डिजिटल भारत का आधार है. बैंकिंग, पूंजी बाजार एवं बीमा समेत संपूर्ण वित्तीय सेवाएं दूरसंचार की बुनियाद पर ही टिकी होती हैं. मनोरंजन, इ-गवर्नेंस, टेलीमेडिसिन, ऑनलाइन इ-कॉमर्स जैसी सभी अहम सेवाएं एक स्वस्थ तथा सबल दूरसंचार क्षेत्र पर आधारित हैं. इसलिए, यह बहुत जरूरी है कि हम इस क्षेत्र को हद से ज्यादा जोखिम में न डालें. यह क्षेत्र पहले से ही 18 प्रतिशत की ऊंची जीएसटी दर के अलावा 30 हजार करोड़ रुपयों के उपयोग न किये गये बड़े इनपुट कर साख से युक्त है. दूरसंचार पर समग्र संचयी कराधान लगभग सिगरेट के ही समान है! इतनी ज्यादा अहमियत का एक क्षेत्र यकीनन ऐसे बर्ताव का हकदार तो नहीं.

जब अगले कुछ वर्षों में भारत पांच लाख करोड़ डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने की ओर अग्रसर है, तो इस अर्थव्यवस्था का क्रमशः बढ़ता हुआ हिस्सा डिजिटल अर्थव्यवस्था से ही आयेगा. इसके हकीकत में बदलने के लिए दूरसंचार क्षेत्र का स्वस्थ तथा फायदेमंद होना आवश्यक है. सरकारी विनियामकों, नीति निर्माताओं तथा वित्तप्रदाताओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इस क्षेत्र में आज की गलाकाट प्रतियोगिता और उपयोग दरों के निहायत ही गैरफायदेमंद हदों तक उतर आने से परे इसकी लाभप्रद वृद्धि का स्वस्थ मार्ग प्रशस्त हो सके. वरना वह दिन दूर नहीं, जब भारत की दूरसंचार कामयाबी के किस्से इसकी तवारीख के पन्नों में ही सिमट कर रह जायेंगे.

(अनुवाद : विजय नंदन)

भारत पांच लाख करोड़ डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने की ओर अग्रसर है, तो इस अर्थव्यवस्था का बढ़ता हुआ हिस्सा डिजिटल अर्थव्यवस्था से ही आयेगा. इसके हकीकत में बदलने के लिए दूरसंचार क्षेत्र का फायदेमंद होना आवश्यक है.

आपके पत्र

भीड़ की हिंसा पर रोक के लिए बने कड़ा कानून

भीड़ की हिंसा के मामले की बिना किसी किंतु-परंतु की निंदा होनी चाहिए. पीड़ित अथवा हमलावर की जाति या फिर उसका मजहब देखकर उद्वेलित होना या न होना ठीक नहीं. तबरेज अंसारी के परिवार को न्याय मिले, इसकी चिंता करते समय यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि न्याय की दरकार मथुरा के उस लस्सी विक्रेता के परिवार को भी है जो चंद दिनों पहले भीड़ की हिंसा का शिकार बना है. हिंसा-हत्या के मामलों में अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक का चश्मा चढ़ाकर प्रतिक्रिया व्यक्त करने की आदत ठीक नहीं है. चाहे राज्य में किसी भी पार्टी की सरकार हो, लेकिन इस रोक लगाने के लिए कठोर से कठोर कानून बनाना चाहिए. प्रशासनिक अधिकारी व पुलिस को भी इस मामले में सतर्क रहकर काम करने की जरूरत है.

डॉ हेमंत कुमार, गोराडीह (भागलपुर)

स्कूलों में शिक्षकों की कमी भर्ती प्रक्रिया में आये तेजी

राज्य सरकार शिक्षा में सुधार के लिए कई योजनाएं चला रही हैं. मिड-डे-मिल, पोशाक राशि, छात्रवृत्ति, साइकिल समेत कई सुविधाएं बच्चों को उपलब्ध करायी जा रही है. इससे सरकारी स्कूलों में बच्चों की उपस्थिति भी बढ़ी है. लेकिन, बेहतर शिक्षा देने की दिशा में और प्रयास करने की जरूरत है. स्कूलों में शिक्षकों की कमी के कारण बच्चे आते हैं और मध्याह्न भोजन के बाद चले जाते हैं. इसलिए सरकारी स्कूलों में शिक्षकों की कमी को दूर करने के लिए बहाली की घोषणा की गयी है. इसमें तेजी लाने की जरूरत विद्यालय में शिक्षकों की भारी कमी है. इस मामले में पूरे देश में बिहार राज्य की स्थिति काफी दयनीय है. अभिभावक अपने बच्चों के बेहतर एवं सस्ती शिक्षा को लेकर काफी चिंतित रहते हैं.

सोनू कुमार सोनी, बेतिया (पश्चिमी चंपारण)

बेटियों की सुरक्षा के प्रति गंभीर हों समाज व सरकार

आज बेटियां किसी भी मामले में बेटों से कम नहीं है. जिंदगी के हर मोड़ पर वह लड़कों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है, लेकिन वास्तविक स्थिति यह है कि अगर बेटियां घर से बाहर निकलती हैं तो उनके परिवार वाले उनकी सुरक्षा को लेकर काफी चिंतित रहते हैं. रात में कोई भी घर की महिलाओं या लड़कियों को अकेले बाहर नहीं भेजना चाहता. महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध से मन सशंकित रहता है. लाख प्रयास के बाद भी दुष्कर्म जैसे मामले नहीं थम रहे हैं. सवाल यह है कि दोषी इन घटनाओं को अंजाम देने के पहले डरते क्यों नहीं? यह हमारे दंड व्यवस्था के लिए एक चुनौती है. इन मामलों में दोषियों को इतनी कड़ी सजा मिलनी चाहिए कि भविष्य में कोई भी अपराधी ऐसा घिनौना कृत्य करने के पहले ही संभल जाये. समाज के लोगों को भी ऐसे जघन्य अपराध करनेवालों को बहिष्कृत करना चाहिए.

हैप्पी कुमार, पतौरा (मोतिहारी)

कुछ अलग

हाय हाय! ये कमजोरी!

अंशुमाली रस्तोगी
व्यंग्यकार
anshurstg@gmail.com

तमाम तरह की समस्याओं के बीच एक समस्या से हम आज भी पार नहीं पा सके हैं, वह है 'मर्दाना कमजोरी'! जब इस किस्म के इश्तहार दीवारों पर लिखे और अखबारों में छपे देखता हूं, तो महसूस होता है कि मेडिकल साइंस द्वारा इतनी तरक्की करने के बाद भी यह समस्या अब भी जस की तस बनी हुई है. इश्तहार देखकर लगता है कि मुल्क की आधे से ज्यादा आबादी इसी समस्या से जूझ रही है! गली-कूचों में खुले 'शर्तिया इलाज' के दवाखाने और सड़क किनारे लगे 'बड़ी से बड़ी बीमारी को खत्म करने का अचूक नुस्खा' टाइप टेंट इस बात का प्रमाण हैं.

इधर, जब से इंटरनेट का असर घर-घर तक हुआ है, तब से तो हर बंदा खुद ही डॉक्टर हो गया है. उसे जो भी, जैसा भी मर्ज हो, वह उसे गूगल पर सर्च कर अपना इलाज खुद ही कर रहा है! बल्कि अपने जाननेवालों को बता भी रहा है कि फलां रोग के लिए फलां नुस्खा बेहतर रहेगा.

अच्छा, मैं अक्सर ही एक बात सोचा करता हूं कि मर्दाना कमजोरी जैसे रोग पुरुष के ही हिस्से सबसे ज्यादा क्यों आये हैं? जबकि पुरुष तो बेहद बलशाली होता है. न केवल स्त्री पर, बल्कि दीन-दुनिया सब पर राज करता है. मजाल है जो पुरुष का कोई बाल भी बांका कर सके! फिर भी वह 'मर्दाना कमजोरी' के आगे हारा हुआ है! लेकिन वह इस कमजोरी को 'स्वीकार' नहीं करेगा. ऐसे 'हारे हुए मर्द' हमारे आस-पास न जाने कितने हैं, जिनकी एक टांग घर में, तो दूसरी टांग दवाखाने में रहती है. कमजोरी से निजात पाने को जाने क्या-क्या नहीं करते. इस पर कोई सवाल उठा दे, तो उस पर यों भड़क उठते हैं, मानो उसने उनकी दुखती रग पर हाथ धर दिया हो.

मेरे विचार में, मर्द को अब खुद को 'शक्तिशाली' कहना-मानना छोड़ ही देना चाहिए! मुझे तो वह स्त्री से कल भी हारा हुआ नजर आता था और आज भी हारा हुआ ही नजर आ रहा है! अगर मैं गलत हूं, तो ये सारे नुस्खे पुरुषों पर ही क्यों लागू होते हैं, स्त्री पर क्यों नहीं? क्या इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए? मैंने ऐसा कम ही सुना है कि किसी स्त्री ने इन दवाखानों के चक्कर लगाये हों. या दीवारों पर उनके लिए कथित इश्तहार देखने में आये हों.

'मर्दाना कमजोरी' से लड़ रहा मर्द कैसे दुनिया-समाज को संभाल पायेगा, यह सोचकर ही मैं घबराने लगता हूं. है न कितना अजीब कि एक तरफ दुनिया इतनी तेजी से डिजिटल हुई जा रही है, निरंतर बदल रही है, लेकिन वहीं दूसरी तरफ कुछ मर्द अब भी अपनी मर्दाना कमजोरी का शर्तिया इलाज तंत्र-मंत्र युक्त दवाइयों की पुड़ियों और दीवारों पर चिपके इश्तहारों में खोज रहे हैं.

अभी अखबार में छपे एक विज्ञापन को देख रहा हूं, जो 'खोई ताकत' को पाने का राज बता रहा है. ताकत अगर ऐसे ही खोती रही और पुरुष ऐसे ही विज्ञापनों में इसे पाने का हल पाता रहा, तो वह दिन दूर नहीं, जब स्त्री को 'एक ताकतवर पुरुष' पाने के विज्ञापन अखबारों में छपवाने पड़ेंगे.

देश दुनिया से

एकरम इमामोग्लू की जीत के मायने

इस्तांबुल के मेयर पद के लिए एकरम इमामोग्लू द्वारा राष्ट्रपति तैयप एर्दोगन द्वारा समर्थित प्रतिद्वंद्वी को हराने के बाद तुर्की के विपक्षी समर्थक देर रात तक जश्न में डूबे रहे. सड़कों पर चारों ओर कारों का काफिला नजर आ रहा था, लोग खुशियां मनाते हुए तुर्की के झंडे लहरा रहे थे. सवाल यह है कि तुर्की के सबसे बड़े शहर के मेयर पद पर राजनीति में नये एकरम इमामोग्लू की जीत एर्दोगन के लिए क्या मायने रखती है? क्या विपक्ष की यह जीत उनके शासन के लिए एक गंभीर चुनौती है? सत्ता पर मजबूत पकड़ बनाये रखनेवाले एर्दोगन की छाया में विपक्ष ने लगभग दो दशक बिताये हैं. इमामोग्लू ने इसी मार्च में इस्तांबुल के मेयर पद के लिए कम अंतर से जीत दर्ज की थी, लेकिन प्रक्रियागत अनियमितताओं के कारण मतदान रद्द कर दिया गया था. दोबारा हुए मतदान में इमामोग्लू ने 54 प्रतिशत की बढ़त हासिल की और सरकार के उम्मीदवार बिनाली यिलदिरीम को हराया, उन्हें 45 प्रतिशत मत मिले थे. इमामोग्लू की इस भारी जीत से अटकलें लगायी जा रही हैं कि एर्दोगन और उनके इस्लामिक-झुकाव वाले जस्टिस एंड डेवलपमेंट पार्टी, एकेपी को 2002 में पहली बार सत्ता में आने के बाद अब वास्तविक चुनौती का सामना करना पड़ सकता है.

Khaleej Times

कार्टून कोना

साभार : कार्टूनमूवमेंटडॉटकॉम

पोस्ट करें : प्रभात खबर, अद्वैता भवन, बोरिंग रोड चौराहा, पटना, **मेल करें** : patna@prabhatkhabar.in
ध्यान रखें, इ-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है. **फैक्स करें** : 0612-2540610 पर